दैनिक जागरण

लोभ सिर्फ अहित ही कराता है

नाकाम राजनीति

आखिरकार महाराष्ट्र में वही हुआ जिसका अंदेशा था। राज्यपाल ने राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने की जो सिफारिश की उस पर राष्ट्रपति ने मुहर लगा दी। इसी के साथ शिवसेना की तीखी आपत्ति तो सामने आई ही, कांग्रेस और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी ने भी नाखुशी जताने में देर नहीं की। शिवसेना राज्यपाल के फैसले के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट की चौखट पर भी पहुंच गई है, लेकिन यह व्यर्थ की कवायद है। यह जितना हास्यास्पद है उतना ही विचित्र भी कि शिवसेना राज्यपाल को कांग्रेस और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के समर्थन पत्र देने के बजाय सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाना पसंद कर रही है। क्या यह वही शिवसेना नहीं जो चंद दिनों पहले तक यह जाहिर कर रही थी कि उसके लिए सरकार बनाना बायें हाथ का खेल है? वह आनन-फानन सरकार बना लेने की खुशफहमी से इस कदर ग्रस्त थी कि कांग्रेस से समर्थन मिलने का भरोसा मिलने के पहले ही उसने भाजपा से नाता तोड़ने का फैसला कर लिया। यह मानने के अच्छे-भले कारण हैं कि सरकार बनाने में मिली नाकामी से खिसियाई शिवसेना राष्ट्रपति शासन के खिलाफ शोर मचाकर यह दिखाना चाह रही है कि उसके साथ अन्याय हो गया। इस चीख-पुकार से कुछ हासिल होने वाला नहीं है, क्योंकि राष्ट्रपति शासन लगने का यह अर्थ नहीं कि अब कोई सरकार बनाने का दावा पेश नहीं कर सकता।

चूंकि राष्ट्रपति शासन लगने के बाद भी विधानसभा भंग नहीं की गई है इसलिए शिवसेना या राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी आवश्यक बहुमत जुटाकर कभी भी सरकार बनाने का दावा पेश कर सकती हैं। आखिर उन्हें ऐसा करने से किसने रोका है? इस दलील में ज्यादा दम नहीं कि राज्यपाल को और इंतजार करना चाहिए था, क्योंकि एक पखवारा बीत गया है और महाराष्ट्र राजनीतिक अनिश्चितता में झूल रहा है। वहां का शासन-प्रशासन एक तरह से ठप है। यह आदर्श स्थिति नहीं। सरकार बनने का इंतजार करते रहने का कोई मतलब नहीं। क्या यह बेहतर नहीं होगा कि राजनीतिक दल राज्यपाल और केंद्र सरकार के फैसले को कोसने के बजाय इस सवाल का जवाब दें कि वे सरकार क्यों नहीं बना पा रहे हैं? चूंकि राष्ट्रपति शासन लगने के बाद शिवसेना के साथ-साथ कांग्रेस और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी नए सिरे से सक्रिय हो गई हैं इसलिए हो सकता है कि कुछ समय बाद कोई सरकार बन जाए। यदि यह सरकार शिवसेना के नेतृत्व में बनती है तो उसे कांग्रेस और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के समक्ष नतमस्तक हो रहना होगा। जब हर कोई शिवसेना की इस संभावित दयनीय दशा की कल्पना कर हैरान है तब उसके सत्तालोलुप नेता इससे अनजान बने रहने में ही अपनी भलाई समझ रहे हैं। यह एक तरह का आत्मघात ही है।

बुलबुल का कहर

चक्रवाती तूफान की पूर्व सूचना और अलर्ट जारी होने के बावजूद बंगाल में 14 लोगों की जान चली गई और करोड़ों की संपत्ति का नुकसान हुआ है। तीन दिन पहले आए चक्रवात बुलबुल से निपटने के लिए केंद्र से लेकर राज्य सरकार और यहां तक कि खुद मुख्यमंत्री ममता बनर्जी शनिवार की पूरी रात सचिवालय के कंट्रोल रूम गुजारी थीं और पूरी स्थिति पर नजर रख रही थीं। बावजूद इसके जान-माल के नुकसान को पूरी तरह नहीं रोका जा सका। इससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि प्राकृतिक आपदा के सामने सिर्फ लोग ही नहीं, बल्कि पूरी व्यवस्था कितनी मजबूर है। यह तो शुक्र है कि हमारे वैज्ञानिक वहां तक पहुंच चुके हैं कि चक्रवती तूफान आने से कई दिन पहले ही लोगों तक सूचना देने के साथ-साथ प्रशासन को भी सतर्क कर दे रहे हैं, जिसके चलते लोगों की जानें कम जा रही है। यही दस वर्ष पहले तक चक्रवती तूफान में सैकड़ों लोगों की जानें चली जाती थीं। बंगाल में तो इस बुलबुल चक्रवात ने तो व्यापक कहर ढाया है। विनाश को देखने के लिए सोमवार को मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने दक्षिण 24 परगना जिले के चक्रवात प्रभावित इलाकों का हवाई सर्वेक्षण किया। साथ ही बुलबुल तूफान में मारे गए लोगों के स्वजनों को दो-दो लाख रुपये की आर्थिक मदद की घोषणा की। ममता ने कहा कि प्रशासन ने 1.78 लाख लोगों को सुरक्षित स्थान पर पहुंचाया। जिस तरह से बंगाल में बुलबुल का मुकाबला किया गया, उसकी तारीफ केंद्र सरकार भी कर रही है। मुख्यमंत्री हवाई मार्ग से दक्षिण 24 परगना जिले के नामखाना, बकखाली एवं अन्य इलाकों में पहुंचीं और वहां बुलबुल से हुई तबाही का मुआयना किया। इसके बाद उन्होंने काकद्वीप में प्रशासनिक अधिकारियों के साथ बैठक की। मुख्यमंत्री ने कहा कि इस वक्त बिजली की आपूर्ति बहाल करना एवं पेयजल एवं दवाओं की आपूर्ति करना प्राथमिकता है। उन्होंने प्रशासनिक अधिकारियों से लोगों तक पहुंचने और क्षेत्र में राहत सामग्रियों का वितरण सुनिश्चित करने को कहा। मुख्यमंत्री ने राहत एवं पुनर्वास कार्यों के लिए दो विशेष टास्क फोर्स का गठन किया है। केंद्रीय पर्यवेक्षक का एक दल भी मुआयना करने आ रहा है। क्षतिग्रस्त मकानों का निर्माण राज्य सरकार की आवासीय योजना के तहत किया जाएगा। बुलबुल से तकरीबन 5-6 लाख लोग प्रभावित हुए हैं और दो लाख मकानों को नुकसान पहुंचा है। हालांकि इसके बावजूद और भी सतर्कता बरतने की जरूरत है, ताकि जानमाल के नुकसान को और कम किया जा सके।

राष्ट्रहित में किया आरसेप से किनारा

अमित शाह

इतिहास साक्षी है कि आरसेप में भारत के पक्ष को कमजोर करने के बीज कांग्रेस सरकार के कार्यकाल में ही बोए गए थे

भारत ने रीजनल कांप्रिहेंसिव इकोनॉमिक पार्टनरशिप यानी आरसेप को खारिज कर दिया और इस तरह 4 नवंबर, 2019 की तारीख भारत के व्यापारिक समझौता वार्ताओं के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित हो गई। आज का भारत अंतरराष्ट्रीय दबाव में झुकने वाला नहीं, बल्कि अपने हितों की रक्षा करने वाला भारत है। पहले के मुकाबले देश में एक नई ऊर्जा का प्रवाह है। इस ऊर्जा के सूत्रधार प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी हैं। आरसेप प्रस्ताव को नकारने का मर्म प्रधानमंत्री मोदी के इस बयान में समाहित है, 'जब मैं सभी भारतीयों के हितों के संबंध में आरसेप समझौते को मापता हूं तो मुझे सकारात्मक जवाब नहीं मिलता है। न तो गांधीजी की नीति (स्वदेशी) और न ही मेरा विवेक मुझे आरसेप में शामिल होने की अनुमति देता है।'

इस निर्णय से मोदी जी ने देश के किसानों, सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों, कपड़ा व्यापार, डेयरी और विनिर्माण क्षेत्र, दवा, इस्पात और रासायनिक उद्योगों के हितों की रक्षा की है। उन्होंने बड़ी मजबूती के साथ भारत का पक्ष विश्व के बड़े नेताओं के समक्ष रखा और तब तक इस समझौते में शामिल नहीं होने का निर्णय लिया जब तक भारत के व्यापारिक घाटे, डंपिंग और अन्य महत्वपूर्ण शर्तों पर सहमति नहीं बन जाती। मेरा मानना है कि भारत को किसी भी ऐसे अंतरराष्ट्रीय करार का हिस्सा नहीं बनना चाहिए जो एकतरफा हो और जिसमें भारत के किसानों और उद्यमियों के हितों से समझौता किया गया हो, मगर बड़े दुख की बात है कि कांग्रेस के नेतृत्व में संप्रग सरकार अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत के हितों की रक्षा करने में पूरी तरह असफल रही। 2007 में कांग्रेस सरकार ने चीन के साथ क्षेत्रीय व्यापार समझौता यानी आरटीए पर विचार करना शुरू कर दिया था। भारतीय अर्थव्यवस्था को कांग्रेस ने कितना नुकसान पहुंचाया, यह इससे प्रमाणित होता है कि चीन से भारत का व्यापार घाटा उसके कार्यकाल में 23 गुना बढ़ा। 2005 में भारत का यह घाटा 1.9 अरब डॉलर था। वहीं 2014 में यह बढ़कर 44.8 अरब डॉलर हो गया। आप कल्पना कर सकते हैं कि इससे स्थानीय उद्योगों को कितना भारी नुकसान हुआ होगा।

अंतरराष्ट्रीय दबाव में भारतीय किसानों और उद्योगों के हितों से समझौता करना कांग्रेस का इतिहास रहा है। 2013 का बाली समझौता इसका उदाहरण है। तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और वाणिज्य मंत्री आनंद शर्मा ने बाली में हुई डब्ल्यूटीओ बैठक में देश को कृषि सब्सिडी और कृषि उत्पादों को समर्थन मूल्य देने के प्रावधान को कमजोर करने की राह पर डाल दिया। जब 2014 में निजाम बदला तब पीएम मोदी के निर्देश पर तत्कालीन वाणिज्य मंत्री निर्मला सीतारमण ने इसे खारिज कर देश के किसानों का भविष्य सुरक्षित किया।

आरसेप से बाहर आने के हमारे राष्ट्रहित के फैसले का कांग्रेस नेता यह कहकर श्रेय लेने का प्रयास कर रहे हैं कि यह उनके दबाव से संभव हुआ। इतिहास साक्षी है कि आरसेप में भारत के पक्ष को कमजोर करने के बीज कांग्रेस सरकार के कार्यकाल में ही बोए गए थे।

शुरुआती स्तर पर आरसेप में दस सदस्यीय आसियान देशों के अलावा केवल चीन, जापान और दक्षिण कोरिया के शामिल होने की योजना थी, मगर अतिउत्साह की शिकार कांग्रेस सरकार ने आरसेप संबंधी वार्ता को मंजूरी दी जबकि यह स्पष्ट था कि यह चीनी उत्पादों के लिए भारतीय बाजार को खोलने का दरवाजा है। भारत का इन देशों के साथ भारी व्यापार घाटा है, फिर भी कांग्रेस सरकार ने आरसेप में शामिल होना उचित समझा। इसका हमारे छोटे व्यापारियों, दुग्ध उत्पादकों और किसानों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना निश्चित था। इससे पहले कांग्रेस ने राष्ट्रीय हितों को आसियान-एफटीए समझौते में भी दरकिनार किया। भारत ने लगभग 74 प्रतिशत वस्तुओं के लिए अपना बाजार खोलने का निर्णय लिया जबकि इंडोनेशिया और वियतनाम जैसे देशों ने भारत के लिए मात्र 50 प्रतिशत और 69 प्रतिशत तक ही अपना बाजार खोला। इसका नतीजा रहा कि भारत का आरसेप देशों से व्यापारिक घाटा, जो 2004 में सात अरब डॉलर था, 2014 आते-आते 78 अरब डॉलर पहुंच गया।

अवधेश राजपूत

अपनी खराब नीतियों के चलते कांग्रेस ने आरसेप की शुरुआत में ही कई गलत प्रस्ताव स्वीकार कर लिए थे। 2014 से ही मोदी सरकार ने कांग्रेस की गलतियों को सुधारने का अथक प्रयास किया। तबसे भारत आरसेप समझौता वार्ता में लगातार अपने हितों की रक्षा करता रहा और अपनी तमाम मांगें मनवाईं। जैसे पहली बार सेवा क्षेत्र भारत के लिए खोला गया। इससे भारतीयों के लिए इन देशों में रोजगार के अवसर मिलने की राह खुली। भारत को बड़े पैमाने पर अपने उत्पादों के निर्यात का मौका भी मिला। साथ ही निवेश संबंधी प्रस्ताव भी भारतीय मांग के अनुरूप मंजूर किए गए। आरसेप में शामिल होने के लिए कांग्रेस इतनी अधीर थी कि उसने 2016 तक समझौता लागू होने के अनुमान से यह तय कर लिया कि जो इंपोर्ट ड्यूटी 1 जनवरी, 2014 को लागू थी, उसे ही बेस रेट मान लिया जाए। इसका परिणाम यह होता कि जब भी आरसेप लागू होता तब भारत में जो इंपोर्ट ड्यूटी होती वह इन देशों के आयात पर (जो हमारे घरेलू उद्योगों का संरक्षण करती है) घटकर 2014 के स्तर पर लागू होती। इससे आयात बढ़ता और भारतीय उद्योगों को भारी नुकसान होता। इस बीच हमारी एक मुख्य मांग यह रही कि मौजूदा हालात को देखते हुए इंपोर्ट ड्यूटी के लिए 2019 को ही आधार वर्ष बनाया जाए। हालिया आरसेप बैठक में प्रधानमंत्री मोदी और वाणिज्य मंत्री पीयूष गोयल ने भारतीय किसानों, डेरी उद्योग, लघु/मध्यम और विनिर्माण उद्योग के हितों को आधार बनाकर भारत का पक्ष मजबूती के साथ रखा। इस वार्ता में राष्ट्रहित से जुड़े तमाम अहम मुद्दे उठाए गए। जैसे टैरिफ डिफरेंशियल में संशोधन, सीमा शुल्क की आधार दर में बदलाव, मोस्ट फेवर्ड नेशन नियम का उन्मूलन, संवेदनशील क्षेत्रों में निवेश को एक विशेष नियम से बाहर रखना, निवेश प्रक्रिया में भारत के संघीय ढांचे के महत्व का सम्मान आदि। वास्तव में इस वार्ता के एजेंडे में शामिल 70 में से 50 बिंदु भारत के थे।

फिलहाल भारत ने आसियान समझौते और दक्षिण कोरिया के साथ सेपा समझौते की समीक्षा शुरू कर दी है। हम जापान, अमेरिका, यूरोपीय संघ और अन्य विकसित देशों के साथ निकट भविष्य में समझौते करने वाले हैं। इनसे देश के किसानों, लघु-मध्यम उद्योगों और विनिर्माण क्षेत्र को भारी लाभ होगा। इससे देश को पांच ट्रिलियन डॉलर अर्थव्यवस्था बनाने में मदद मिलेगी। जहां तक आरसेप का प्रश्न है तो प्रधानमंत्री वैश्विक स्तर पर भारत को जिस तरह स्थापित कर रहे हैं उसे देखते हुए आरसेप में हमारी मांगों की लंबे अर्से तक अनदेखी नहीं की जा सकती। एफटीए के जरिये आसियान के साथ हमारा व्यापार प्रगति पर है वहीं आरसेप को खारिज करके हमने चीन के संभावित नकारात्मक प्रभाव को खत्म कर दिया है।

(लेखक केंद्रीय गृहमंत्री हैं)

response@jagran.com

दलदल में फंसी शिवसेना

डॉ. एके वर्मा

उद्धव ठाकरे ने अपनी हठधर्मिता के चलते अनावश्यक रूप से अपने मतदाताओं को नाराज करने का ही काम किया

महाराष्ट्र में राष्ट्रपति शासन लगने के आसार तभी उभर आए थे जब कांग्रेस और राकांपा के ठिठक जाने के कारण शिवसेना सरकार बनाने लायक जरूरी संख्याबल जुटाने में नाकाम रही थी। इसके पहले देवेंद्र फड़नवीस ने राज्यपाल भगत सिंह कोश्यारी द्वारा सरकार बनाने के निमंत्रण को पर्याप्त संख्याबल न होने के आधार पर अस्वीकार कर दिया था। ऐसा करके भाजपा ने एक स्वस्थ राजनीति का संकेत दिया। महाराष्ट्र संभवतः पहला ऐसा राज्य है जहां एक साथ चुनाव लड़ने और जीतने के बाद भी घटक-दलों में विवाद हो गया और गठबंधन सरकार नहीं बन सकी। इसके लिए शिवसेना की महत्वाकांक्षा ही जिम्मेदार है। भाजपा के इन्कार के बाद राज्यपाल ने दूसरा आमंत्रण शिवसेना को ही दिया, जो राकांपा-कांग्रेस के सहयोग से सरकार बनाने को आतुर थी। शिवसेना की ओर से पर्याप्त समर्थन न जुटा पाने के बाद आमंत्रण शरद पवार को मिला, लेकिन उन्होंने सरकार गठन के लिए और समय की मांग कर दी। इसके बाद राज्यपाल ने राष्ट्रपति शासन की सिफारिश कर दी।

शायद शिवसेना को यह विश्वास नहीं था कि भाजपा सरकार बनाने में कदम पीछे खींच लेगी। इसीलिए उसने भाजपा के धैर्य की सीमा के आगे जाकर अपनी मांगें रखीं, लेकिन अब वह दलदल में फंस गई है। वह भाजपा से भी गई और राकांपा-कांग्रेस समर्थन से भी। मुख्यमंत्री पद का जो बेबुनियाद सपना शिवसेना प्रमुख उद्धव ठाकरे ने अपने पुत्र आदित्य ठाकरे के लिए पाला था वह टूटना ही था। उद्धव ठाकरे को अपना अहं छोड़कर मराठा नेता शरद पवार की शरण में जाना पड़ा। राजनीति के मंझे खिलाड़ी पवार को एक तीर से कई निशाने लगाने आते हैं। एक ओर वह मराठा अस्मिता के नायक के रूप में उभरे और दूसरी ओर उन्होंने प्रदेश की राजनीति में उद्धव ठाकरे और शिवसेना के पर भी कतरे। वह महाराष्ट्र की राजनीति में 'गैर-भाजपावाद' की मुहिम चलाकर और कांग्रेस को ऑक्सीजन देने का आश्वासन देकर सोनिया गांधी को भी दबाव में लेने की कोशिश रहे थे, लेकिन सोनिया ने पवार, ठाकरे और भाजपा, तीनो को कांग्रेस के वजूद का अहसास करा दिया। राज्य में आगे जो भी हो, भाजपा को यह सीख जरूर मिली कि उसे वहां चुनाव-पूर्व गठबंधन के चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए था।

वैसे तो भाजपा और शिवसेना, दोनों का वैचारिक धरातल काफी समान है, लेकिन क्षेत्रीय पार्टी के रूप में शिवसेना ने राज्य में अपने कद को बढ़ाने के लिए भाजपा को नुकसान पहुंचाने का कोई अवसर नहीं छोड़ा। विगत पांच वर्षों में भाजपा-शिवसेना गठबंधन सरकार का अनुभव सुखद नहीं रहा। यदि भाजपा 2014 वाला फार्मूला अपनाती और अलग चुनाव लड़ती तो शिवसेना को अपनी 'हैसियत' का अहसास हो जाता। 2014 में भाजपा ने 260 सीटें लड़ीं और 122 जीतीं। उसका स्ट्राइक रेट 47 प्रतिशत था। 2019 में भाजपा केवल 144 सीटें लड़ीं और 105 जीतीं। उसका स्ट्राइक रेट 74 प्रतिशत पर पहुंच गया। स्पष्ट है कि इस बार मतदाताओं के बीच भाजपा की स्वीकार्यता अधिक थी।

यदि भाजपा अकेले चुनाव लड़ती तो परिणाम कुछ और ही होते। तब शायद उसे किसी समर्थन की जरूरत नहीं पड़ती या शिवसेना ऐसी सौदेबाजी नहीं कर पाती जिससे महाराष्ट्र को सरकार से वंचित होना पड़ता। आगे परिदृश्य कैसा होगा? यदि विधानसभा भंग होती है तो अगले चुनावों में भाजपा निश्चित ही अकेले चुनाव में उतरेगी। ऐसे में उसके बहुमत प्राप्त करने की संभावना बढ़ जाएगी, जैसा कि 2014 में हुआ था। जाहिर है कि भाजपा की मंशा यही होगी कि कोई 'गैर-भाजपा' सरकार न बने और विधानसभा भंग कर दी जाए। कांग्रेस के लिए भी शिवसेना को सरकार बनाने के लिए समर्थन देने या न देने का निर्णय बहुत कठिन है। कांग्रेस और शिवसेना का वैचारिक धरातल बिल्कुल अलग है। शिवसेना का समर्थन कर उसे अपनी भावी राजनीति को पुनर्परिभाषित करने में मुश्किल होगी। शिवसेना और राकांपा क्षेत्रीय दल हैं, लेकिन कांग्रेस का तो राष्ट्रीय फलक है। उसे केवल महाराष्ट्र नहीं, वरन पूरे देश की राजनीति के बारे में सोचना होगा। सूबे में ऐसी बेमेल खिचड़ी सरकार बनाने या उसमें सहयोग से राष्ट्रीय स्तर पर कांग्रेस के प्रतिकूल संदेश ही जाएगा। यदि शिवसेना-राकांपा और कांग्रेस सरकार बन भी जाए तो संभावना बहुत कम है कि वह स्थिरता हासिल कर पाएगी। इससे स्वयं शिवसेना का जनाधार खिसककर भाजपा की ओर जा सकता है, क्योंकि कांग्रेस एवं राकांपा से मेलजोल के कारण उसका मतदाता वैचारिक धरातल पर खुद को भाजपा के अधिक निकट पाएगा।

भाजपा और कांग्रेस, दोनों का साझा हित इसमें है कि राज्यों में क्षेत्रीय पार्टियों का उभार न होने दिया जाए। महाराष्ट्र प्रकरण में शिवसेना नेता संजय राउत ने महाभारत के 'शकुनी' की याद दिला दी। उन्होंने, उद्धव ठाकरे को पुत्र-मोह का ऐसा पाठ पढ़ाया जैसा शकुनी ने धृतराष्ट्र को दुर्योधन के लिए पढ़ाया था। भाजपा-शिवसेना में अलगाव का अध्याय तो लिख ही गया, शिवसेना का पतन भी निश्चित हो गया। जनता में उसकी छवि धूमिल हुई है। उसके लिए लोगों को यह समझाना मुश्किल होगा कि दशकों पुराने साथी भाजपा से जब उसकी नहीं पटी तो उन दलों से कितनी देर पटेगी जिनसे वैचारिक मतभेद हैं? उद्धव ने अपनी हठधर्मिता के चलते अनावश्यक रूप से मतदाता को नाराज किया। इसका खामियाजा शिवसेना को आगामी चुनाव में उठाना ही पड़ेगा। शिवसेना यह भूल गई कि मोदी सरकार में शामिल होने से पार्टी की राष्ट्रीय अस्मिता उभर रही थी। अपने एकमात्र मंत्री अरविंद सावंत को मोदी मंत्रिमंडल से इस्तीफा दिलाकर उद्धव ने अपने दल की राष्ट्रीय अस्मिता को भी खत्म कर दिया। यह साफ है कि महाराष्ट्र के राजनीतिक घटनाक्रम से भाजपा, राकांपा और कांग्रेस का तो कुछ नहीं बिगड़ा, पर शिवसेना को नुकसान उठाना पड़ा।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ सोसायटी एंड पॉलिटिक्स के निदेशक हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

श्रद्धा

शास्त्रों में वर्णित है-श्रद्धावान लभते ज्ञानं। श्रद्धावान को ही ज्ञान का लाभ प्राप्त होता है और ज्ञान ही पाशिवक जीवन से ऊंचा उठकर देवत्व धारण करने का सर्वप्रमुख आधार है। संसार के किसी भी मार्ग एवं क्षेत्र में लक्ष्य की प्राप्ति एवं महारथ हासिल करने के लिए श्रद्धा को संबल बनाया जाता है। भगवत् प्राप्ति के लिए श्रद्धा ही अनिवार्य है। जहां श्रद्धा है वहां कुछ भी प्राप्त होना कठिन नहीं है। श्रद्धा की भूख जब व्यक्ति के हृदय में जगती है तो लक्ष्य प्राप्ति, हर सपना साकार करने की व्यग्रता मन में छा जाती है और मन में एक जुनून की तरंग दृष्टिगोचर होती है। जब तक उसकी प्राप्ति नहीं हो जाती, तब तक मन-हृदय में शांति नहीं मिलती है।

मन हृदय में जब श्रद्धा की भूख प्रबल होती है तो वह प्रार्थना ईश्वरीय रूप बन जाती है। ईश्वर किसी की प्रार्थना को न ठुकराते हैं और न नजरअंदाज करते हैं। वे तो भक्त की श्रद्धा-भाव के भूखे होते हैं। बशर्ते कि भक्त की श्रद्धा मजबूत होनी चाहिए, क्योंकि भगवत् प्राप्ति के मार्ग में भक्त की श्रद्धा की परीक्षा होती है। जिनकी श्रद्धा मजबूत होती है, वे भगवान की प्राप्ति के लक्ष्य में सफल होते हैं। श्रद्धा ही प्रेम, भक्ति, विश्वास का सर्वप्रमुख आधार है। श्रद्धा के कारण ही यज्ञ, तप, पूजा, दान किए जाते हैं। बरसात में पानी वहीं एकत्रित होता है, जहां गड्ढा होता है। चट्टानों पर एक बूंद भी पानी नहीं टिकता है और जिन घड़ों का मुंह ऊपर की ओर होता है, उनमें लबालब पानी भर जाता है और टेढ़े-मेढ़े, उलटे घड़े में पानी का आंशिक रूप भी प्राप्त नहीं होता। श्रद्धा के अभाव में सभी बादल मिलकर भी घनघोर वर्षा करें तो चट्टान पर पानी नहीं टिकेगा। भगवान की कृपा श्रद्धालु ही पाते हैं। निष्ठुर लाभ प्राप्ति के लिए अयोग्य हैं। श्रद्धा ही प्राप्ति की पात्रता है। एकलव्य श्रद्धा के बल पर गुरु द्रोणाचार्य की प्रतिमा बनाकर अर्जुन से भी ज्यादा धनुर्धर बना था। श्रद्धा हो तो गगन से तारे तोड़े जा सकते हैं और पर्वतों में भी पथ निर्माण हो जाता है। इसके लिए यही करना होता है कि अपने शब्दकोश से असंभव शब्द को बाहर निकाल दिया जाए।

मुकेश ऋषि

कुपोषण की पहेली और समाधान

जोनाथन मिलर

देश की कृषि नीति अब भी 'तीन प्रमुख अनाजों' – चावल, गेहूं और मक्का को ही बढ़ावा देने में लगी है

देश की प्रगति और खाद्य उत्पादन, आय, साक्षरता दर एवं कई अन्य क्षेत्रों में प्रभावोत्पादक प्रगति के बाद भी मोटे तौर पर भारत की 15 प्रतिशत आबादी यानी 20 करोड़ लोग कुपोषित हैं। कुपोषण की यह दर निम्न-सहारा के कई सर्वाधिक निर्धन देशों से भी बदतर है। जाने-माने कृषि विशेषज्ञ डॉ. प्रभु पिंगली बताते हैं, 'भारत ने भूख की स्थिति से निपटने और खासकर कैलोरी उपभोग के मामले में भारी तरक्की की है, लेकिन पोषण परिणाम के मामले में हम पीछे छूट गए हैं।' देश की कृषि नीति, जो अकाल के भय से प्रेरित रही है, अब भी 'तीन प्रमुख अनाजों' को ही बढ़ावा देने में लगी है-चावल, गेहूं और मक्का। कुपोषण का समाधान अधिक अनाज या अधिक खाद्य में नहीं, बल्कि बेहतर खाद्य, बेहतर आहारों, बेहतर बाजारों, बेहतर शिक्षा और बेहतर स्वच्छता में निहित है। पिंगली ने पोषण में सुधार के लिए चार परस्पर संबद्ध उपायों की पहचान की है, जिनमें पहला अधिक आय, दूसरा आहारीय विविधता, तीसरा सकारात्मक पोषण व्यवहार और चौथा बेहतर स्वच्छता है। ये उपाय उन व्यावहारिक तथा नवाचारी प्रयोगों के हिस्से रहे हैं, जिन्होंने ठोस नतीजों की उपलब्धि में मदद पहुंचा कर इन उपायों की प्रभावशीलता सिद्ध कर दी है।

गवर्नेंस, बुनियादी ढांचा एवं बाजार की वास्तविकताएं जैसे समग्र कारकों का पोषण पर सर्वाधिक असर होता है, पर उसमें व्यक्तिगत रवैये की भी अहम भूमिका होती है। व्यवहार परिवर्तन संवाद के तहत लोगों को अपनी आहार संबंधी आदतें बदलने अथवा स्वच्छता संबंधी परिपाटियां सुधारने को प्रोत्साहित किया जाता है। जैसे कि एक प्रक्रिया के तहत ग्रामीण लोग प्रशिक्षक के साथ उस क्षेत्र में जाते हैं, जहां ग्रामीण शौच किया करते हैं। प्रशिक्षक किसी व्यक्ति के सिर के एक बाल को एक ताजे मल में डुबो कर उसके बाद उसे एक गिलास पानी में डुबोता है और तब वह पानी ग्रामीणों को पीने के लिए बढ़ाता है। ग्रामीण उसे पीने से इन्कार करते हैं। इसी बीच मक्खियां चारों ओर पड़े मल और वहीं रखे एक प्लेट चावल पर बैठती-उड़ती रहती हैं। तब प्रशिक्षक ग्रामीणों को यह बताता है कि मक्खियां अपने छह पैरों में से प्रत्येक में बाल के एक लट की अपेक्षा कहीं अधिक मल ढोती हैं। इस प्रदर्शन का एक प्रभाव पड़ता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यवहार परिवर्तन सुनिश्चित करने की दिशा में उससे संबद्ध संवाद एक अहम तत्व है। यदि यह निष्कर्ष सत्य हो तो इसका भारी राष्ट्रव्यापी असर हो सकता है। जागरूकता तथा नजरिये में परिवर्तन से समुदाय एक स्वस्थ जीवनशैली अपनाने को प्रेरित हो सकता है।

कृषि मंत्रालय को अपनी 'मुख्य अनाज कट्टरता' को छोड़ कर 'पोषण-संवेदी नीतियां' अपनानी चाहिए। यानी ऐसी कृषि जो प्रत्यक्ष रूप से आहार की गुणवत्ता एवं विविधता सुधारने पर लक्षित हो। यदि हम पारिवारिक स्तर पर ऐसी आय वृद्धि, जो लोगों को गरीबी से बाहर निकल सके तथा महिला साक्षरता जैसे दो ही मुद्दों पर कार्य करें तो बाकी सबको भी हम काफी आगे बढ़ा ले जाएंगे।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

मेलबाक्स

फैसले को पूर्वाग्रही दृष्टि से न देखें

अयोध्या फैसला पढ़ें वामपंथी इतिहासकार शीर्षक से लिखे अपने लेख में इतिहासकार प्रो. मक्खन लाल ने श्रीराम जन्मभूमि फैसले के संदर्भ में वामपंथी इतिहासकारों को यह उचित परामर्श दिया है कि उन्हें अपने दुराग्रह से बाहर निकल कर इस फैसले को हिंदू-मुस्लिम के नजरिये से नहीं, अपितु पुरातात्विक और ऐतिहासिक तथ्यों के आलोक में देखना चाहिए। इस संदर्भ में यह समझने की जरूरत है कि न्यायालयी निर्णय के आधार बिंदु इतिहास और पुरातत्व के वही साक्ष्य और प्रमाण हैं, जिन्हें दुराग्रहवश अभी तक नकारा जाता रहा है। वस्तुतः जब किसी वस्तु को पूर्वाग्रही दृष्टि से देखा जाता है तो वह वैसी ही दिखाई देती है जैसा हम देखना चाहते हैं। भारत की सनातन संस्कृति और आस्था से समानांतर दूरी बनाकर चलने वाले वामपंथी इतिहासकारों ने कभी भी भारत के मान बिंदुओं का आदर नहीं किया। शायद इसीलिए उनको आक्रांता बाबर के सिपहसालार मीर बकी द्वारा अयोध्या में श्रीराम जन्मभूमि स्थल पर बने प्राचीन मंदिर को बलात रूप से ढहाकर बनाई गई मस्जिदनुमा इमारत में ऐतिहासिकता नजर आती है और भारत की आध्यात्मिक चेतना की प्रतीक श्रीराम की जन्मभूमि अयोध्या अफगानिस्तान में दिखाई देती है। भारतीय आध्यात्म और संस्कृति के प्रति इस तरह की नकारात्मक दृष्टि का ही दुष्परिणाम रहा कि स्वतंत्र भारत में श्रीराम जन्मभूमि हमेशा विवादित बनी रही और इस पर बेवजह की विकृत राजनीति होती रही, लेकिन अब समय आ गया है कि भारत को भारतीयता के संदर्भों में देखा जाय और बेवजह भारत के प्राचीन इतिहास और पुरातात्विक साक्ष्यों को किसी पूर्वाग्रह के वशीभूत होकर तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत न किया जाए। श्रीराम जन्मभूमि के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय आज इसीलिए सर्वमान्य है, क्योंकि यह हिंदू-मुस्लिम की सांप्रदायिक सोच से परे हटकर भारत के पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

pandeyvp1960@gmail.com

अवसरवाद की राजनीति

पिछले कुछ वर्षों से राजनीति केवल संभावनाओं का राजनीतिक अखाड़ा बन कर रह गया है जहां हर तरह के छोटे बड़े राजनीति के अवसरवादी पहलवान लंगोट कसे तैयार बैठे हैं जिनमे नैतिकता के पुट तो बहुत दूर की बात है कायदे कानून व भार वर्ग की भी कोई अहमियत नहीं है, बस अवसरवादिता के तहत जीतना मकसद है। उत्तर प्रदेश मे लोकसभा चुनाव 2019 में गेस्ट हाउस कांड भुला बुआ और बबुआ का नामी महा अखाड़ा तैयार किया गया, लेकिन चुनाव परिणाम आते ही अखाड़ा अवसरवादिता के जाल में उलझ गया और स्वार्थ की राजनीति जीत गई। ऐसे ही कर्नाटक 2018 के मई विधानसभा चुनावों में दो विपरीत ध्रुवों के तथाकथित स्वार्थी गठबंधन का राजनीतिक खेल खेला गया, जिसका हश्र सर्वविदित है, लेकिन महाराष्ट्र की राजनीति में हतप्रभ कर देने वाले समीकरणों का असामयिक जो जोड़ तोड़ बैठाया गया उसमें विश्वसनीय राजनीति कराह रही है। एनसीपी और कांग्रेस ने सार्वजनिक तौर पर खुद स्वीकार किया था कि जनादेश विपक्ष में बैठने का मिला है, लेकिन राजनीतिक चक्र की अवसरवादिता को संजीवनी देकर जनता के जनादेश को रौंद कर रख दिया गया। क्या ये घटनाक्रम शिवसेना प्रमुख बालासाहेब ठाकरे और युग पुरुष अटल बिहारी वाजपेयी के आपसी तालमेल, विश्वास, संतुलित व बेजोड़ कार्यशैली पर कुठाराघात नहीं कहलाएगा? क्या ऐसी बेमेल विचारधारा की राजनीति से प्रदेश व आमजन का कुछ भी भला होने वाला है, सिवाय खुद को छोड़कर? स्वार्थ की राजनीति क्षणभंगुर होती है, पर अकेलेपन का अहसास केवल धृतराष्ट्र को ही पता है।

दीपक गौतम, सोनीपत

सही सुझाव

पटकथा लेखक सलीम खान ने सही कहा है कि अयोध्या में सुप्रीम कोर्ट के फैसले में मुस्लिम समुदाय को मिलने वाली पांच एकड़ जमीन पर स्कूल और अस्पताल बनाया जाए। देश में आज मस्जिदों और धर्मगुरुओं की कोई कमी नहीं है। देश में सही शिक्षा, चिकित्सा और सुशासन का घोर अभाव है। इसलिए आज इन धर्मस्थलों से कहीं ज्यादा तो देश में सही स्कूल और अस्पतालों की ही अधिक जरूरत है। यही बात आज अन्य समुदायों के लिए भी बिल्कुल सही लगती है। इसलिए आज इस पर सभी को बड़ी गंभीरता से विचार के साथ कुछ ठोस करने का वक्त आ गया है।

वेद मामूरपुर, नरेला

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।